पन्द्रहवाँ अध्याय

श्रीपराशर उवाच

तपश्चरत्सु पृथिवीं प्रचेतःसु महीरुहाः । अरक्ष्यमाणामावव्रुर्बभूवाथ प्रजाक्षयः ॥१॥
नाशकन्मरुतो वातुं वृतं खमभवद्द्रुमैः । दशवर्षसहस्राणि न शेकुश्चेष्टितुं प्रजाः ॥२॥
तान्दृष्ट्वा जलनिष्क्रान्ताः सर्वे क्रुद्धाः प्रचेतसः । मुखेभ्यो वायुमग्निं च तेऽसृजन् जातमन्यवः ॥३॥
उन्मूलानथ तान्वृक्षान्कृत्वा वायुरशोषयत् । तानग्निरदहद्घोरस्तत्राभूद्द्रुमसंक्षयः ॥४॥
द्रुमक्षयमथो दृष्ट्वा किञ्चिच्छिष्टेषु शाखिषु । उपगम्याब्रवीदेतान्राजा सोमः प्रजापतीन् ॥५॥
कोपं यच्छत राजानः शृणुध्वं च वचो मम । सन्धानं वः करिष्यामि सह क्षितिरुहैरहम् ॥६॥
रत्नभूता च कन्येयं वार्क्षेयी वरवर्णिनी । भविष्यज्जानता पूर्वं मया गोभिर्विवर्द्धिता ॥७॥
मारिषा नाम नाम्नैषा वृक्षाणामिति निर्मिता । भार्या वोऽस्तु महाभागा ध्रुवं वंशविवर्द्धिनी ॥८॥
युष्माकं तेजसोऽर्द्धेन मम चार्द्धेन तेजसः । अस्यामुत्पत्स्यते विद्वान्दक्षो नाम प्रजापतिः ॥९॥
मम चांशेन संयुक्तो युष्मत्तेजोमयेन वै । तेजसाग्निसमो भूयः प्रजाः संवर्द्धयिष्यति ॥१०॥
कण्डुर्नाम मुनिः पूर्वमासीद्वेदविदां वरः । सुरम्ये गोमतीतीरे स तेपे परमं तपः ॥११॥
तत्क्षोभाय सुरेन्द्रेण प्रम्लोचाख्यावराप्सराः । प्रयुक्ता क्षोभयामास तमृषिं सा शुचिस्मिता ॥१२॥
क्षोभितः स तया सार्द्धं वर्षाणामधिकं शतम् । अतिष्ठन्मन्दरद्रोण्यां विषयासक्तमानसः ॥१३॥

प्रचेताओं का मारिषा नाम की कन्या से विवाह, दक्ष प्रजापति की उत्पत्ति तथा दक्ष की आठ कन्याओं के वंश का वर्णन

श्रीपराशर महर्षि ने कहा— प्रचेताओं के तपस्या करते रहने के कारण, तथा किसी से रक्षित नहीं होने के कारण, पृथिवी को वृक्षों ने ढँक लिया और बहुत अधिक प्रजाएँ विनष्ट हो गयीं ॥१॥ आकाश वृक्षों से भर गया अतएव दश हजार वर्ष तक हवा भी नहीं चली और न तो प्रजाएँ कोई चेष्टा कर सकीं ॥२॥ जब प्रचेतागण जल से बाहर निकले तो वृक्षों को देखकर क्रुद्ध हो गये । उनलोगों ने अपने मुख से वायु तथा अग्नि को प्रकट किया ॥३॥ वायु ने उन वृक्षों को उखाड़ कर सुखा दिया और अग्नि ने उन सबों को जला दिया । उसके कारण वृक्षों का नाश हो गया ॥४॥ सोम ने वृक्षों के नाश को देखा जब कुछ ही वृक्ष बचे थे उस समय उन्होंने (चन्द्रमा) ने उन प्रजापतियों से कहा ॥५॥ हे राजाओं ! आपलोग क्रोध शान्त करें और हमारी बात को सुनें । मैं आप की वृक्षों से सन्धि कराऊँगा ॥६॥ वृक्षों से उत्पन्न, रत्नस्वरूपी सुन्दर वर्ण वाली कन्या का भविष्य को जानने वाले मैंने अपनी किरणों से पाला है ॥७॥ वृक्षों की पुत्री मारिषा नाम की कन्या इसीलिए उत्पन्न हुयी है, कि वह आपलोगों की पत्नी बनकर आपलोगों के वंश की वृद्धि करें ॥८॥ आपलोगों के आधे तेज से तथा आधे मेरे तेज से इस मारिषा का दक्ष प्रजापति नामक विद्वान् पुत्र होगा ॥९॥ वह आपलोगों के तेज के साथ मेरे तेज से युक्त होकर अग्नि के समान तेजस्वी होगा और प्रजाओं की खूब वृद्धि करेगा ॥१०॥ प्राचीन काल में वेदज्ञों में सर्वश्रेष्ठ, कण्डु नामक महामुनि थे। उन्होंने गोमती नदी के सुन्दर तट पर घोर तपस्या की ॥११॥ इन्द्र ने उन्हें तपस्या से भ्रष्ट करने के लिए एक प्रम्लोचा नाम की श्रेष्ठ अप्सरा को उनके पास भेजा । मनोहर मुसुकान वाली उस अप्सरा ने मुनि को तपोभ्रष्ट कर दिया ॥१२॥ क्षुब्ध होकर महर्षि उस अप्सरा के साथ मन्दराचल पर्वत की कन्दरा में कामासक्त होकर सौ वर्षों से भी अधिक रहे ॥१३॥ एक दिन उस अप्सरा ने कण्डु महर्षि से कहा महर्षे मैं अब स्वर्ग जाना चाहती हूँ, आप मुझे

तं सा प्राह महाभाग गन्तुमिच्छाम्यहं दिवम् । प्रसादसुमुखो ब्रह्मन्ननुज्ञां दातुमर्हसि ॥१४॥
तयैवमुक्तः स मुनिस्तस्यामासक्तमानसः । दिनानि कतिचिद्भद्रे स्थीयतामित्यभाषत ॥१५॥
एवमुक्ता ततस्तेन साग्रं वर्षशतं पुनः । बुभुजं विषयांस्तन्वी तेन साकं महात्मना ॥१६॥
अनुज्ञां देहि भगवन् व्रजामि त्रिदशालयम् । उक्तस्तथेति स पुनः स्थीयतामित्यभाषत ॥१७॥
पुनर्गते वर्षशते साधिके सा शुभानना । यामीत्याह दिवं ब्रह्मन्प्रणयस्मितशोभनम् ॥१८॥
उक्तस्तयैवं स मुनिरुपगुह्यतेक्षणाम् । इहास्यतां क्षणं सुभ्रु चिरकालं गमिष्यसि ॥१९॥
सा क्रीडमाना सुश्रोणी सह तेनर्षिणा पुनः । शतद्वयं किञ्चिदूनं वर्षाणामन्वतिष्ठत ॥२०॥
गमनाय महाभाग देवराजनिवेशनम् । प्रोक्तः प्रोक्तस्तया तन्व्या स्थीयतामित्यभाषत ॥२१॥
तस्य शापभयाद्भीता दाक्षिण्येन च दक्षिणा । प्रोक्ता प्रणयभङ्गर्त्तिवेदिनी न जहौ मुनिम् ॥२२॥
तया च रमतस्तस्य परमर्षेरहर्निशम् । नवं नवमभूत्प्रेम मन्मथाविष्टचेतसः ॥२३॥
एकदा तु त्वरायुक्तो निश्चक्रामोटजान्मुनिः । निष्क्रामन्तं च कुत्रेति गम्यते प्राह सा शुभा ॥२४॥
इत्युक्तः स तया प्राह परिवृत्तमहः शुभे । सन्ध्योपास्तिं करष्यिामि क्रियालोपोऽन्यथा भवेत् ॥२५॥
ततः प्रहस्य सुदती तं सा प्राह महामुनिम् । किमद्य सर्वधर्मज्ञ परिवृत्तमहस्तव ॥२६॥
बहूनां विप्र वर्षाणां परिवृत्तमहस्तव । गतमेतन्न कुरुते विस्मयं कस्य कथ्यताम् ॥२७॥

मुनिरुवाच

प्रातस्त्वमागता भद्रे नदीतीरमिदं शुभम् । मया दृष्टासि तन्वङ्गि प्रविष्टासि ममाश्रमम् ॥२८॥

प्रसन्नता पूर्वक आज्ञा प्रदान करें ॥१४॥ उस अप्सरा के द्वारा इस तरह से कहे जाने पर उसमें आसक्तचित वाले महर्षि ने कहा भद्रे ! कुछ दिन और यहाँ ठहरो ॥१५॥ महर्षि के द्वारा इस तरह से कहने पर उनके साथ विषयों का भोग करती हुयी वह अप्सरा वहाँ अगले सौ वर्षों तक रही ॥१६॥ उसके पश्चात् भगवन् मैं स्वर्ग जा रही हूँ मुझे आज्ञा दें; इस तरह से अप्सरा के द्वारा कहे जाने पर मुनि ने कहा अभी और रुको ॥१७॥ उसके पश्चात् फिर जब सौ वर्षों से कुछ अधिक समय बीत गया तो प्रणय युक्त मुस्कान वाली तथा सुन्दर मुखवाली उसने कहा ब्रह्मन् ! मैं स्वर्गलोक जा रही हूँ ॥१८॥ उसके द्वारा इस तरह से कहे जाने पर मुनि ने अप्सरा का अलिङ्गन करके कहा अब तो तुम दीर्घकाल के लिए चली जाओगी, क्षणभर यहाँ रूको ॥१९॥ फिर सुन्दर श्रोणी (कमर) वाली वह उन ऋषि के साथ क्रीडा करती हुयी दो सौ वर्षों से कुछ कम वहाँ पर रुकी रही ॥२०॥ हे महाभाग ! जब कभी भी वह इन्द्र के घर जाने के लिए कहती थी तो ऋषि उससे कहते थे कि अभी रुको ॥२१॥ महर्षि के शाप के भय से भयभीत तथा दाक्षिण्य गुण से सम्पन्न एवं प्रणय भङ्गजन्य कष्ट को जानने वाली वह मुनि को नहीं छोड़ती थी ॥२२॥ उसके साथ रात-दिन रमण करते हुए महर्षि का उसमें नवीन-नवीन प्रेम होता जाता था ॥२३॥ एक दिन महर्षि बड़ी शीघ्रता से अपनी कुटी से बाहर निकले तो उन्हें निकलते हुए देखकर अप्सरा ने पूछा कहाँ जा रहें हैं ?॥२४॥ इस तरह उस अप्सरा के द्वारा पूछे जाने पर महर्षि ने कहा सूर्यास्त होने वाला है । मैं सन्ध्योपासन करूँगा, अन्यथा नित्यकृत्य का लोप हो जायेगा ॥२५॥ उसके पश्चात् उस सुन्दर दन्त पंक्ति वाली अप्सरा ने हँसकर कहा हे सभी धर्मों को जानने वाले क्या आज ही आपका सूर्यास्त हुआ है ?॥२६॥ अनेक वर्षों के पश्चात् आज आपका सूर्यास्त हुआ है, यह सुनकर भला किसको आश्चर्य नहीं होगा ?॥२७॥ **मुनि ने कहा—** भद्रे ! आज ही प्रात:काल तुम सुन्दर नदी के तट पर आयी थी । मैंने आज ही तुम्हें अपने आश्रम में प्रवेश करते हुए देखा था ॥२८॥ अब यह सन्ध्या हो रही है । दिन

इयं च वर्तते सन्ध्या परिणाममहर्गतम्। उपहासः किमर्थोऽयंसद्भावः कथ्यतां मम ॥२९॥

प्रम्लोचोवाच

प्रत्यूषस्यागता ब्रह्मन् सत्यमेतन्न तन्मृषा। नन्वस्य तस्य कालस्य गतान्यब्दशतानि ते ॥३०॥

सोम उवाच

ततस्ससाध्वसो विप्रस्तां पप्रच्छायतेक्षणाम्। कथ्यतां भीरु कः कालस्त्वया मे रमतः सह ॥३१॥

प्रम्लोचोवाच

सप्तोत्तराण्यतीतानि नववर्षशतानि ते। मासाश्च षट्तथैवान्यत्समतीतं दिनत्रयम्॥३२॥

ऋषिरुवाच

सत्यं भीरु वदस्येतत्परिहासोऽथ वा शुभे। दिनमेकमहं मन्ये त्वया सार्द्धमिहासितम्॥३३॥

प्रम्लोचोवाच

वदिष्याम्यनृतं ब्रह्मन्कथमत्र तवान्तिके। विशेषेणाद्य भवता पृष्टा मार्गानुवर्तिना ॥३४॥

सोम उवाच

निशम्य तद्वचः सत्यं स मुनिर्नृपनन्दनाः। धिग्धिङ् मामित्यतीवेत्थं निनिन्दात्मानमात्मना ॥३५॥

मुनिरुवाच

तपांसि मम नष्टानि हतं ब्रह्मविदां धनम्। हतो विवेकः केनापि योषिन्मोहाय निर्मिता॥३६॥
ऊर्मिषट्कातिगं ब्रह्म ज्ञेयमात्मजयेन मे। मतिरेषा हृता येन धिक् तं कामं महाग्रहम् ॥३७॥
व्रतानि वेदवेद्याप्तिकारणान्यखिलानि च। नरकग्राममार्गेण सङ्गेनापहृतानि मे ॥३८॥
विनिन्द्येत्थं स धर्मज्ञः स्वयमात्मानमात्मना। तामप्सरसमासीनामिदं वचनमब्रवीत् ॥३९॥

ढल गया है। सच बतलाओ ! इस तरह का उपहास क्यों करती हो ?॥२९॥ **प्रम्लोचा ने कहा—** ऋषे ! मैं प्रातःकाल में आयी थी यह सत्य है इसमें कोई भी झूठ नहीं है; किन्तु उस समय के बीते हुए तो सैकड़ों वर्ष बीत गये ॥३०॥ **सोम ने कहा—** उसके पश्चात् घबराकर महर्षि ने उस विशाल नेत्रों वाली से पूछा हे भीरु ! बतलाओ तुम्हारे साथ रमण करते हुए मेरे कितने समय बीत गये ॥३१॥ **प्रम्लोचा ने कहा—** तब से आज तक नव सौ सात वर्ष, छह मास तथा तीन दिन बीत चुके हैं ॥३२॥ **ऋषि ने पूछा—** हे शुभे ! हे भीरु ! क्या यह तुम सत्य कह रही हो अथवा परिहास कर रही हो ? मुझे तो यही लगता है कि तुम्हारे साथ मैंने एक दिन बिताया है ॥३३॥ **प्रम्लोचा ने कहा—** हे ब्रह्मन् ! आपके सन्निकट में मैं झूठ कैसे बोल सकती हूँ ? खासकर उस समय जब आप धर्ममार्ग में तत्पर होकर मुझसे पूछ रहे हैं ॥३४॥ **सोम ने कहा—** राजकुमारों उसके इस सत्य वचन को सुनकर मुनि ने मुझको धिक्कार है ! मुझको धिक्कार है !! इस प्रकार से अपने को बहुत धिक्कारा और अपनी निन्दा की॥३५॥ **मुनि ने कहा—** मेरी तपस्या विनष्ट हो गयी, ब्रह्म ज्ञानियों का जो धन होता है वह मेरा धन लुट गया। मेरा विवेक विनष्ट हो गया। किसी ने मोह को उत्पन्न करने के ही लिए स्त्रियों का निर्माण किया है ॥३६॥ अपने मन को वश में करके छह उर्मियों से ऊपर विद्यमान ब्रह्मतत्त्व का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए, मेरी इस प्रकार की बुद्धि को जिसने विनष्ट कर दिया उस काम रूपी महाग्रह को धिक्कार है ॥३७॥ नरक समूह के मार्ग रूपी इस स्त्री के सङ्ग से वेदवेद्य परमात्मा की प्राप्ति के साधन स्वरूप मेरे सारे व्रत विनष्ट हो गये ॥३८॥ इस तरह से धर्मज्ञ उन मुनि ने स्वयं अपनी निन्दा करके वहाँ बैठी हुयी उस अप्सरा से कहा ॥३९॥ अरे पापिनी अब तुम जहाँ जाना चाहती है,

गच्छ पापे यथाकामं यत्कार्यं तत्कृतं त्वया। देवराजस्य मत्क्षोभं कुर्वन्त्या भावचेष्टितैः ॥४०॥
न त्वां करोम्यहं भस्म क्रोधतीव्रेण वह्निना। सतां सप्तपदं मैत्रमुषितोऽहं त्वया सह ॥४१॥
अथवा तव को दोषः किं वा कुप्याम्यहं तव। ममैव दोषो नितरां योनाहमजितेन्द्रियः ॥४२॥
यया शक्रपियार्थिन्या कृतो मे तपसो व्ययः। त्वया धिक्तां महामोहमञ्जूषां सुजुगुप्सिताम् ॥४३॥

सोम उवाच

यावदित्थं स विप्रर्षिस्तां ब्रवीत सुमध्यमाम्। तावद्गलत्स्वेदजला सा बभूवातिवेपथुः ॥४४॥
प्रवेपमानां सततं स्वन्नगात्रलतां सतीम्। गच्छ गच्छेति सक्रोधमुवाच मुनिसत्तमः ॥४५॥
सा तु निर्भर्त्सिता तेन विनिष्क्रम्य तदाश्रमात्। आकाशगामिनी स्वेदं ममार्ज तरुपल्लवैः ॥४६॥
निर्मार्जिमाना गात्राणि गलत्स्वेदजलानि वै। वृक्षाद्वृक्षं ययौ बाला तदग्रारुणपल्लवैः ॥४७॥
ऋषिणा यस्तदा गर्भस्तस्या देहे समाहितः। निर्जगाम स रोमाञ्चस्वेदरूपी तदङ्गतः ॥४८॥
तं वृक्षा जगृहुर्गर्भमेकं चक्रे तु मारुतः। मया चाप्यायितो गोभिः स तदा ववृधे शनैः ॥४९॥
वृक्षाग्रगर्भसम्भूता मारिषाख्या वरानना। तां प्रदास्यन्ति वो वृक्षाः कोप एष प्रशाम्यताम् ॥५०॥
कण्डोरपत्यमेवं सा वृक्षेभ्यश्च समुद्गता। ममापत्यं तथा वायोः प्रम्लोचातनया च सा ॥५१॥

श्रीपराशर उवाच

स चापि भगवान् कण्डुः क्षीणे तपसि सत्तमः। पुरुषोत्तमाख्यं मैत्रेय विष्णोरायतनं ययौ ॥५२॥
तत्रैकाग्रमतिर्भूत्वा चकाराराधनं हरेः। ब्रह्मपारमयं कुर्वञ्जपमेकाग्रमानसः।

वहाँ जा, तुमने, अपनी भावभङ्गिमाओं के द्वारा मुझमें क्षोभ उत्पन्न करके देवराज इन्द्र का काम कर दिया ॥४०॥ मैं अपने तीव्र क्रोध से उत्पन्न अग्नि से तुम्हें इसलिए भस्म नहीं कर रहा हूँ कि सज्जनों की मित्रता सात पग एक साथ चलने मात्र से हो जाती है, और मैं तो इतने दिनों तक तुम्हारे साथ रह चुका हूँ ॥४१॥ अथवा इसमें तुम्हारा दोष ही क्या है ? कि मैं तुम पर क्रोध करूँ ? इसमें सारा दोष तो हमारा है, क्योंकि मैं अजितेन्द्रिय हूँ ॥४२॥ तु महामोह की मञ्जूषा है तथा अत्यन्त निन्दनीय हो । तुमने इन्द्र का कार्य करने के लिए मेरी तपस्या नष्ट कर दी । तुमको धिक्कार है ॥४३॥ **सोम ने कहा—** जब तक वे ब्रह्मर्षि इस प्रकार से उस सुन्दरी से कहते रहे तब तक वह भयभीत होकर पसीने-पसीने होकर काँपती रही ॥४४॥ निरन्तर काँपती हुयी तथा पसीने से सराबोर होकर काँपती हुयी प्रम्लोचा को उन मुनि श्रेष्ठ ने क्रोध पूर्वक कहा जाओ-जाओ ॥४५॥ उन ऋषि के द्वारा फटकारी गयी वह उस आश्रम से निकलकर आकाश में जाती हुयी उसने वृक्ष के पल्लवों से अपने पसीने को पोंछा ॥४६॥ शरीर से निकलने वाले पसीने को उस बाल वृक्षों के लाल-लाल किसलयों से पोंछती हुयी एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर चलती गयी।॥४७॥ ऋषि ने उसके शरीर में जिस गर्भ को स्थापित किया था, वह भी रोमों से निकले हुए पसीने के माध्यम से उसके शरीर से निकल गया ॥४८॥ उस गर्भ को वृक्षों ने ग्रहण कर लिया और वायु ने उसे एकत्रित कर दिया मैंने (सोम ने) अपनी किरणों से उसे पोषित किया और उसके पश्चात् वह धीरे-धीरे बढ गया ॥४९॥ वृक्षों के अग्रभाग से उत्पन्न वह मारिषा नाम की सुमुखी है । वृक्ष उसे आपलोगों को प्रदान करेंगे, अतएव आपलोग अपने क्रोध को शान्त करें ॥५०॥ इस प्रकार वृक्षों से उत्पन्न हुयी वह प्रम्लोचा की पुत्री, महर्षि कण्डु, वायु तथा मेरी भी सन्तान है ॥५१॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** वे ऐश्वर्य सम्पन्न ऋषियों में श्रेष्ठ कण्डु महर्षि तपस्या के क्षीण हो जाने से भगवान् विष्णु के आयतन स्वरूप पुरुषोत्तम क्षेत्र में चले गये ॥५२॥ हे राजपुत्रों ! वहाँ पर एकाग्र बुद्धि

ऊर्ध्वबाहुर्महायोगी स्थित्वासौ भूपनन्दनाः ॥५३॥

प्रचेतस ऊचुः

ब्रह्मपारं मुनेः श्रोतुमिच्छामः परमं स्तवम्। जपता कण्डुना देवो येनाराध्यत केशवः॥ ५४॥

सोम उवाच

पारं परं विष्णुरपारपारः परः परेभ्यः परमार्थरूपी ।
स ब्रह्मपारः परपारभूतः परः पराणामपि पारपारः ॥५५॥
स कारणं कारणतस्ततोऽपि तस्यापि हेतुः परहेतुहेतुः ।
कार्येषु चैवं सह कर्मकर्तृरूपैरशेषैरवतीह सर्वम् ॥५६॥
ब्रह्म प्रभुर्ब्रह्म स सर्वभूतो ब्रह्म प्रजानां पतिरच्युतोऽसौ ।
ब्रह्माव्ययं नित्यमजं स विष्णुरपक्षयाद्यैरखिलैरसङ्गि ॥५७॥

ब्रह्माक्षरमजं नित्यं यथाऽसौ पुरुषोत्तमः। तथा रागादयो दोषाः प्रयान्तु प्रशमं मम् ॥५८॥
एतद्ब्रह्मपराख्यं वै संस्तवं परमं जपन्। अवाप परमां सिद्धिं स तमाराध्य केशवम्॥५९॥
(इमं स्तवं यःपठतिशृणुयाद्वापि नित्यशः। स कामदोषैरखिलैर्मुक्तः प्राप्नोति वाञ्छितम् ॥)
इयं च मारिषा पूर्वमासीद्या तां ब्रवीमि वः। कार्यगौरवमेतस्याः कथने फलदायि वः ॥६०॥
अपुत्रा प्रागियं विष्णुं मृते भर्त्तरि सत्तमा। भूपपत्नी महाभागा तोषयामास भक्तितः ॥६१॥
आराधितस्तया विष्णुः प्राह प्रत्यक्षतां गतः। वरं वृणीष्वेति शुभे सा च प्राहात्मवाञ्छितम् ॥६२॥

होकर एकाग्रमन से परंब्रह्म के सर्वश्रेष्ठ मन्त्र का जप करते हुए श्रीहरि की आराधना किए। महायोगी कण्डु महर्षि अपनी दोनों भुजाओं को ऊपर उठाकर तपस्या करते थे ॥५३॥ **प्रचेताओं ने कहा—** मुनि ने जिस ब्रह्मपार नामक सर्वश्रेष्ठ स्तोत्र से स्तुति की, उसे हम सुनाना चाहते हैं। जिस स्तोत्र का जप करते हुए कण्डु महर्षि ने भगवान् केशव की आराधना की उसे आप हमें सुनायें ॥५४॥ **सोम ने कहा—** भगवान् विष्णु अपार (अनन्त) होने के कारण सर्वश्रेष्ठ तत्त्व हैं। वे संसार मार्ग की अन्तिम सीमा हैं। वे आकाश से भी परे हैं तथा परमार्थ स्वरूप हैं। जिनका पूर्णरूप से वर्णन नहीं किया जा सकता है, तथा जो अनन्त शक्ति हैं, जो सभी श्रेष्ठों से श्रेष्ठ हैं तथा सबों के कारण स्वरूप हैं ॥५५॥ पञ्चभूतों के कारण स्वरूप पञ्चतन्मात्राओं के हेतु तामस अहङ्कार और उसके भी हेतु महत् तत्त्व के हेतु प्रकृति के भी परम हेतु हैं। इस तरह सभी कर्म तथा कर्ता आदि के साथ कार्यरूप से स्थित सम्पूर्ण जगत् का वे पालन करते हैं ॥५६॥ ब्रह्माजी ही जगत् के स्वामी हैं, वे ही सर्वभूत (जीव) स्वरूप हैं। वे ही प्रजाओं के स्वामी तथा अपनी प्रतिज्ञा से कभी नहीं चूकने वाले अच्युत हैं। वे ब्रह्म ही अव्यय (निर्विकार) नित्य, अजन्मा हैं। वे ही विष्णु हैं। वे ही क्षय आदि समस्त विकारों से रहित हैं ॥५७॥ वे भगवान् विष्णु ही, ब्रह्म, अक्षर, अज, नित्य तथा पुरुषोत्तम हैं। अतएव हमारे राग आदि दोष विनष्ट हो जायँ ॥५८॥ इस ब्रह्मपार नामक स्तोत्र का जप करते हुए महर्षि कण्डु उन भगवान् केशव की आराधना करके परमासिद्ध को प्राप्त कर लिये ॥५९॥ जो व्यक्ति इस स्तोत्र का नित्य पाठ करता है अथवा श्रवण करता है, वह काम आदि दोषों से रहित होकर अपने अभिप्रेत अर्थ को प्राप्त कर लेता है। यह मारिष पहले जन्म में जो थी मैं उसे बतला रहा हूँ। इस बात को जान लेने से तुमलोगों के कार्य का गौरव बढ़ जायेगा ॥६०॥ यह साध्वी पूर्व जन्म में महारानी थी। पुत्र प्राप्ति से पहले ही पति के मर जाने के कारण इस महाभागा ने अपनी भक्ति से भगवान् विष्णु को प्रसन्न किया ॥६१॥ इसकी आराधना से

भगवन्बालवैधव्याद् वृथाजन्माहमीदृशी। मन्दभाग्या समुद्भूता विफला च जगत्पते ॥६३॥
भवन्तु पतयः श्लाघ्या मम जन्मनि जन्मनि। त्वत्प्रसादात्तथा पुत्रः प्राजापतिसमोऽस्तु मे ॥६४॥
कुलं शीलं वयः सत्यं दाक्षिण्यं क्षिप्रकारिता। अविसंवादिता सत्त्वं वृद्धसेवा कृतज्ञता ॥६५॥
रूपसम्पत्समायुक्ता सर्वस्य प्रियदर्शना। अयोनिजा च जायेयं त्वत्प्रसादादधोक्षज ॥६६॥

सोम उवाच

तयैवमुक्तो देवेशो हृषीकेश उवाच ताम्। प्रणामनम्रामुत्थाप्य वरदः परमेश्वरः ॥६७॥

देव उवाच

भविष्यन्ति महावीर्या एकस्मिन्नेव जन्मनि। प्रख्यातोदारकर्माणो भवत्याः पतयो दश ॥६८॥
पुत्रं च सुमहावीर्यं महाबलपराक्रमम्। प्रजापतिगुणैर्युक्तं त्वमवाप्स्यसि शोभने ॥६९॥
वंशानां तस्य कर्तृत्वं जगत्यस्मिन्भविष्यति। त्रैलोक्यमखिला सूतिस्तस्य चापूरयिष्यति ॥७०॥
त्वं चाप्योनिजा साध्वी रूपौदार्यगुणान्विता। मनःप्रीतिकरी नृणां मत्प्रसादाद्भविष्यसि ॥७१॥
इत्युक्त्वान्तर्दधे देवस्तां विशालविलोचनाम्। सा चेयं मारिषा जाता युष्मत्पत्नी नृपात्मजाः ॥७२॥

श्रीपराशर उवाच

ततःसोमस्य वचनाज्जगृहुस्ते प्रचेतसः। संहृत्य कोपं वृक्षेभ्यः पत्नीधर्मेण मारिषाम् ॥७३॥
दशभ्यस्तु प्रचेतोभ्यो मारिषायां प्रजापतिः। जज्ञे दक्षो महाभागो यः पूर्वं ब्रह्मणोऽभवत् ॥७४॥
स तु दक्षो महाभागस्सृष्ट्यर्थं सुमहामते। पुत्रानुत्पादयामास प्रजासृष्ट्यर्थमात्मनः ॥७५॥

प्रसन्न होकर भगवान् विष्णु उसे दर्शन दिए और कहे वर माँगो । उस समय उसने अपने मनोभिलषित वर माँगा॥६२॥ भगवन् ! मैं बालविधवा हूँ । मेरा यह जन्म व्यर्थ है । हे जगत्पते ! मैं मन्दभाग्या तथा फलहीन (पुत्र हीन) हूँ ॥६३॥ अतएव मेरे प्रत्येक जन्म में मेरे पति प्रशंसनीय हों और मेरा पुत्र प्रजापति (ब्रह्माजी) के समान हो॥६४॥ हे अधोक्षज भगवन् ! आपकी कृपा से मैं, कुल, शील, अवस्था, सत्य, दाक्षिण्य (कार्यकुशलता) किसी कार्य को शीघ्र करने की शक्ति, अविसंवादिता (विपरीत न बोलना) सत्व, वृद्धों की सेवा, कृतज्ञता, रूप सम्पत्ति से सम्पन्न, सबों को देखने में प्रिय लगने वाली तथा अयोनिजा रूप से उत्पन्न होऊँ ॥६५-६६॥ **सोम ने कहा—** उसके द्वारा इस तरह से कहे जाने पर देवताओं के स्वामी भगवान् वरदान देने वाले परमेश्वर हृषीकेश ने प्रणाम करने के लिए झुकी हुयी उसे उठाकर कहा ॥६७॥ **श्रीभगवान् ने कहा—** तुम्हारे एक ही जन्म में प्रख्यात तथा उदार कर्म करने वाले दश पति होंगे । उसी समय तुम्हें महापराक्रमी, महाबली तथा प्रजापति के गुणों से युक्त एक पुत्र भी प्राप्त होगा ॥६८-६९॥ वह इस संसार में अनेक वंशों को चलाने वाला होगा । उसकी सन्तान से यह त्रैलोक्य भर जायेगा ॥७०॥ तुम भी मेरी कृपा से उदार रूप एवं गुणों से युक्त, लोगों के मन को प्रसन्न करने वाली तथा अयोनिजा उत्पन्न होयेगी ॥७१॥ हे राजकुमारों ! उस बड़ी-बड़ी नेत्रों वाली को इस प्रकार से वरदान देकर भगवान् विष्णु अन्तर्धान हो गये, वही आपलोगों की पत्नी मारिषा नाम से उत्पन्न हुयी है ॥७२॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** सोम की बातों को सुनकर प्रचेताओं ने अपना क्रोध उपसंहृत कर लिया और मारिषा को पत्नी रूप से स्वीकार किया ॥७३॥ उन दशो प्रचेताओं से मारिषा के पुत्र दक्ष उत्पन्न हुए, जो पूर्व जन्म में ब्रह्माजी से उत्पन्न हुए थे ॥७४॥ हे महामते ! महाभाग दक्ष ने सृष्टि को बढ़ाने के लिए, तथा सन्तान उत्पन्न करने के लिए, नीच (अवर), ऊँच (वर) द्विपदों (दो पैर वाले मनुष्यों) चतुष्पदों (चार पैर वाले पशुओं) आदि पुत्रों को ब्रह्माजी के आदेश का

अवरांश्च वरांश्चैव द्विपदोऽथ चतुष्पदान्। आदेशं ब्रह्मणः कुर्वन् सृष्ट्यर्थं समुपस्थितः ॥७६॥
स सृष्ट्वा मनसा दक्षः पश्चादसृजत स्त्रियः। ददौ स दश धर्माय कश्यपाय त्रयोदश।
कालस्य नयने युक्ताः सप्तविंशतिमिन्दवे ॥७७॥
तासु देवास्तथा दैत्या नागा गावस्तथा खगाः। गन्धर्वाप्सरसश्चैव दानवाद्याश्च जज्ञिरे ॥७८॥
ततः प्रभृति मैत्रेय प्रजा मैथुनसम्भवाः। सङ्कल्पाद्दर्शनात्स्पर्शात्पूर्वेषामभवन् प्रजाः।
तपोविशेषैः सिद्धानां तदात्यन्ततपस्विनाम् ॥७९॥

श्रीमैत्रेय उवाच

अङ्गुष्ठाद्दक्षिणाद्दक्षः पूर्वं जातो मया श्रुतः। कथं प्राचेतसो भूयः समुत्पन्नो महामुने॥८०॥
एष मे संशयो ब्रह्मन्सुमहान्हृदि वर्त्तते। यद्दौहित्रश्च सोमस्य पुनः श्वशुरतां गतः ॥८१॥

श्रीपराशर उवाच

उत्पत्तिश्च निरोधश्च नित्यो भूतेषु सर्वदा। ऋषयोऽत्र न मुह्यन्ति ये चान्ये दिव्यचक्षुषः ॥८२॥
युगे युगे भवन्त्येते दक्षाद्या मुनिसत्तम। पुनश्चैवं निरुद्ध्यन्ते विद्वांस्तत्र न मुह्यति ॥८३॥
कानिष्ठ्यं ज्यैष्ठ्यमप्येषां पूर्वं नाभूद्द्विजोत्तम। तप एव गरीयोऽभूत्प्रभावश्चैव कारणम्॥८४॥

श्रीमैत्रेय उवाच

देवानां दानवानां च गन्धर्वोरगरक्षसाम्। उत्पत्तिं विस्तरेणेह मम ब्रह्मन्प्रकीर्त्तय ॥८५॥

श्रीपराशर उवाच

प्रजाः सृजेति व्यादिष्टः पूर्वं दक्षः स्वयम्भुवा। यथा ससर्ज भूतानि तथा शृणु महामुने ॥८६॥
मानसान्येव भूतानि पूर्वं दक्षोऽसृजत्तदा। देवानृषीन्सगन्धर्वानसुरान्पन्नगांस्तथा ॥८७॥

पालन करते हुए उत्पन्न किया ॥७५-७६॥ दक्ष ने इन सबों की सृष्टि करके मन से स्त्रियों की सृष्टि की। उनमें से अपनी दश पुत्रियों का विवाह दक्ष ने धर्म से कर दिया, कश्यप महर्षि के साथ अपनी तेरह पुत्रियों का विवाह कर दिया। समय के परिवर्तन में लगी हुयी अश्विनी आदि सत्ताइस पुत्रियों का विवाह चन्द्रमा से कर दिया ॥७७॥ उन सबों से देवता, दैत्य, नाग, गौ, पक्षी, गन्धर्व, अप्सराएँ तथा दानव आदि उत्पन्न हुए ॥७८॥ हे मैत्रेय ! उसी समय से प्रजायें मैथुन से उत्पन्न होने लगीं। उससे पहले अत्यधिक तपस्या करने वाले तपस्वियों तथा विशेष प्रकार की तपस्या करने वाले सिद्धों के सङ्कल्प, दर्शन तथा स्पर्श से प्रजाएँ उत्पन्न होती थीं ॥७९॥ **श्रीमैत्रेय महर्षि ने कहा—** हे महामुने ! मैंने तो सुना है कि ब्रह्माजी के दाहिने पैर के अङ्गूठे से दक्ष का जन्म हुआ था, फिर वे प्रचेताओं के पुत्र कैसे हुए ?॥८०॥ हे ब्रह्मन् ! यह मुझको बहुत बड़ा सन्देह है कि जो दक्ष सोम की पुत्री के पुत्र थे वे सोमदेव के श्वसुर कैसे हुए ?॥८१॥ **श्रीपराशर महर्षि ने कहा—** मैत्रेय ! सृष्टि तथा प्रलय तो सदा होते रहते है, इसके विषय में दिव्य चक्षु वाले ऋषियों को किसी प्रकार का मोह नहीं होता है ॥८२॥ हे मुनिश्रेष्ठ ! ये दक्ष आदि प्रत्येक युग में होते हैं और फिर वे लीन हो जाते हैं, इसके विषय में विद्वानों को मोह नहीं होता है ॥८३॥ पहले कोई न तो बड़ा होता था और न छोटा था, उनके बड़े और छोटे होने का कारण, उनकी तपस्या और प्रभाव होता था ॥८४॥ **मैत्रेय महर्षि ने कहा—** हे ब्रह्मन ! आप मुझे देवताओं, दानवों, गन्धर्वों, सर्पों तथा राक्षसों की उत्पत्ति के वृत्तान्त को विस्तार से बतलायें। **पराशर महर्षि ने कहा—** हे महामुने ! प्राचीन काल में ब्रह्माजी ने दक्ष को आदेश दिया कि तुम प्रजाओं की सृष्टि करो। उसके बाद दक्ष ने जो प्रजाओं की सृष्टि की उसे तुम सुनो ॥८६॥ पहले दक्ष ने देवताओं,

यदास्य सृजमानस्य न व्यवर्धन्त ताः प्रजाः । ततःसञ्चिन्त्य स पुनः सृष्टिहेतोः प्रजापतिः ॥८८॥
मैथुनेनैव धर्मेणसिसृक्षुर्विविधाः प्रजाः । असिक्नीमावहत्कन्यां वीरणस्य प्रजापतेः ।
सुतां सुतपसा युक्तां महतीं लोकधारिणीम् ॥८९॥
अथ पुत्रसहस्त्राणि वैरुण्यां पञ्चवीर्यवान् । असिक्न्यां जनयामास सर्गहितोः प्रजापतिः ॥९०॥
तान्दृष्ट्वा नारदो विप्र संविवर्द्धयिषून्प्रजाः । सङ्गम्य प्रियसंवादो देवर्षिरिदमब्रवीत् ॥९१॥
हे हर्यश्वा महावीर्याः प्रजा यूयं करिष्यथ । ईदृशो दृश्यते यत्नो भवतां श्रूयतामिदम् ॥९२॥
बालिशा बत यूयं वै नास्या जानीत वै भुवः । अन्तरूर्ध्वमधश्चैव कथं सृक्ष्यथ वै प्रजाः ॥९३॥
ऊर्ध्वं तिर्यगधश्चैव यदाऽप्रतिहता गतिः । तदा कस्माद्भुवो नान्तं सर्वे द्रक्ष्यथ बालिशाः ॥९४॥
ते तु तद्वचनं श्रुत्वा प्रयाताः सर्वतो दिशम् । अद्यापि नो निवर्तन्ते समुद्रेभ्य इवापगाः ॥९५॥
हर्यश्वेष्वथ नष्टेषु दक्षः प्राचेतसःपुनः । वैरुण्यामथ पुत्राणां सहस्त्रमसृजत्प्रभुः ॥९६॥
विवर्द्धयिषवस्ते तु शबलाश्वाः प्रजाः पुनः । पूर्वोक्तं वचनं ब्रह्मन्नारदेनैव नोदिताः ॥९७॥
अन्योऽन्यमूचुस्ते सर्वे सम्यगाह महामुनिः । भ्रातॄणां पदवी चैव गन्तव्या नात्र संशयः ॥९८॥
ज्ञात्वा प्रमाणं पृथ्व्याश्च प्रजास्त्रक्ष्यामहे ततः । तेऽपि तेनैव मार्गेण प्रयाताः सर्वतोमुखम् ।
अद्यापि न निवर्त्तन्ते समुद्रेभ्य इवापगाः ॥९९॥
ततःप्रभृति वै भ्राता भ्रातुरन्वेषणे द्विज । प्रयातो नश्यति तथा तन्न कार्यं विजानता ॥१००॥
तांश्चापि नष्टान् विज्ञाय पुत्रान् दक्षः प्रजापतिः । क्रोधं चक्रे महाभागो नारदं स शशाप च ॥१०१॥

ऋषियों, गन्धर्वों, असुरों तथा सर्पों की मानसी ही सृष्टि की ॥८७॥ इस तरह से सृष्टि करने पर जब दक्ष की सृष्टि बढ़ी नहीं तब उन प्रजापति ने सृष्टि के विषय में विचार करके मैथुन धर्म से ही प्रजाओं की सृष्टि करने की इच्छा से वीरण प्रजापति की पुत्री आसिक्नी के साथ विवाह किया । वह बहुत बड़ी तपस्विनी तथा लोकों को धारण करने वाली थी ॥८९॥ पराक्रमी दक्ष ने वीरण की पुत्री असिक्नी में पाँच हजार पुत्रों को उत्पन्न किया जिससे की सृष्टि बढ़े ॥९०॥ उन सबों को प्रजाओं की वृद्धि करने का इच्छुक देखकर प्रिय बोलने वाले नारदजी ने उन से मिलकर कहा ॥९१॥ हे महापराक्रमी हर्यश्वों ! आपलोगों के प्रयत्नों को देखने से लगता है कि आपलोग प्रजाओं की सृष्टि करेंगे ॥९२॥ किन्तु तुम लोग मूर्ख हो, तुमलोग पृथिवी के भीतर, ऊपर, नीचे आदि के प्रमाण को जाने बिना कैसे प्रजाओं की सृष्टि करोगे ?॥९३॥ अरे अज्ञानियों ! जब आपलोग, पृथिवी के ऊपर तथा इधर-उधर जाने में समर्थ हैं तो पहले पृथिवी के अन्त का पता क्यों नहीं लगा लेते हैं ?॥९४॥ नारदजी की बातों को सुनकर वे (हर्यश्वगण) सभी दिशाओं में चले गये और जिस तरह समुद्र से नदियाँ नहीं लौटती हैं, उसी तरह आज तक वे नहीं लौटे ॥९५॥ हर्यश्वों के इस प्रकार से चले जाने पर दक्ष ने असिक्नी में पुनः हजारों पुत्रों को उत्पन्न किया ॥९६॥ वे शबलाश्व भी प्रजाओं की सृष्टि करना चाहे तो नारदजी ने उन्हें पुनः उन्हीं बातों को कहा जिन बातों को हर्यश्वों को कहा था ॥९७॥ इसके पश्चात् शबलाश्वों ने आपस में बातें की कि महामुनि नारदजी ने ठीक ही कहा है । हमलोगों को भी अपने भाइयों के ही मार्ग का अनुसरण करना चाहिए ॥९८॥ पहले पृथिवी के प्रमाण को जानकर हम प्रजाओं की सृष्टि करेंगे । और वे शबलाश्व भी अपने भाइयों के ही समान पृथिवी का पता लगाने के लिए चले गये । और वे भी आज तक उसी तरह से नहीं लौटे जिस तरह समुद्र से नदियाँ नहीं लौटती हैं ॥९९॥ हे द्विज ! उसी समय से यदि कोई अपने भाई को खोजने के लिए भाई जाय तो वह नष्ट हो जाता है, अतएव विज्ञों को ऐसा नहीं करना चाहिए ॥१००॥

सर्गकामस्ततो विद्वान्स मैत्रेय प्रजापतिः। षष्टिं दक्षोऽसृजत्कन्या वैरुण्यामिति नः श्रुतम् ॥१०२॥
ददौ स दश धर्माय कश्यपाय त्रयोदश। सप्तविंशति सोमाय चतस्रोऽरिष्टनेमिने ॥१०३॥
द्वे चैव बहुपुत्राय द्वे चैवाङ्गिरसे तथा । द्वे कृशाश्वाय विदुषे तासां नामानि मे शृणु ॥१०४॥
अरुन्धती वसुर्यामिर्लम्बा भानुर्मरुत्वती । सङ्कल्पा च मुहूर्ता च साध्या विश्वा च तादृशी ।
धर्मपत्न्यो दश त्वेतास्तास्वपत्यानि मे शृणु ॥१०५॥
विश्वेदेवास्तु विश्वायाः साध्या साध्यानजायत। मरुत्वत्यां मरुत्वन्तो वसोश्च वसवः स्मृताः ।
भानोस्तु भानवः पुत्रा महूर्तायां मुहूर्तजाः ॥१०६॥
लम्बायाश्चैव घोषोऽथ नागवीथी तु यामिजा ॥१०७॥
पृथिवीविषयं सर्वमरुन्धत्यामजायत। सङ्कल्पायास्तु सर्वात्मा जज्ञे सङ्कल्प एव हि ॥१०८॥
ये त्वनेकवसुप्राणदेवा ज्योतिः पुरोगमाः। वसवोऽष्टौ समाख्यातास्तेषां वक्ष्यामि विस्तरम् ॥१०९॥
आपो ध्रुवश्च सोमश्च धर्मश्चैवानिलोऽनलः । प्रत्यूषश्च प्रभासश्च वसवो नामभिः स्मृताः ॥११०॥
आपस्य पुत्रो वैतण्डः श्रमः शान्तो ध्वनिस्तथा। ध्रुवस्य पुत्रो भगवान्कालो लोकप्रकालनः ॥१११॥
सोमस्य भगवान्वर्चा वर्चस्वी येन जायते ॥११२॥
धर्मस्य पुत्रो द्रविणो हुतहव्यवहस्तथा। मनोहरायां शिशिरः प्राणोऽथ वरुणस्तथा ॥११३॥
अनिलस्य शिवा भार्या तस्याः पुत्रो मनोजवः । अविज्ञातगतिश्चैव द्वौ पुत्रावनिलस्य तु ॥११४॥
अग्निपुत्रः कुमारस्तु शरस्तम्बे व्यजायत। तस्य शाखो विशाखश्च नैगमेयश्च पृष्ठजा ॥११५॥
अपत्यं कृत्तिकानां तु कार्त्तिकेय इति स्मृतः ॥११६॥

महाभाग दक्ष प्रजापति ने जब यह जाना कि उनके वे पुत्र भी नष्ट हो गये तो उन्होंने क्रोध करके नारदजी को शाप दे दिया ।।१०१।। हे मैत्रेय ! हमने सुना है कि दक्ष प्रजापति ने सृष्टि को बढ़ाने के लिए वीरण की पुत्री असिक्नी में साठ कन्याओं को उत्पन्न किया ।।१०२।। उनमें से दश पुत्रियों का विवाह धर्म से कर दिया, तेरह पुत्रियों का विवाह कश्यप मुनि से किया, सत्ताइस पुत्रियों का विवाह सोम (चन्द्रमा) से किया, चार पुत्रियों का विवाह अरिष्टनेमि से किया।।१०३।। दो पुत्रियों को बहुपुत्र से, दो पुत्रियों को अङ्गिरा महर्षि से तथा दो पुत्रियों का विद्वान् कृशाश्व से विवाह किया । अब उन दक्ष की पुत्रियों का नाम सुनो ।।१०४।। अरुन्धती, वसु, यामी, लम्बा, भानु, मरुत्वती, सङ्कल्पा, मुहूर्ता, साध्या, और विश्वा ये दश धर्म की पत्नियाँ थी । अब तुम इन सबों की सन्तानों को सुनो ।।१०५।। विश्वा के पुत्र विश्वेदेव हुए, साध्या से साध्यगण उत्पन्न हुए । मरुत्वती के पुत्र मरुद्गण हुए और वसु के पुत्र वसुगण उत्पन्न हुए। भानु के पुत्र भानुगण हुए और मुहूर्ता के पुत्र मुहुर्तगण हुए ।।१०६।। लम्बा के पुत्र घोष हुए और यामी के पुत्र नागवीथी हुए ।।१०७।। अरुन्धती के सभी पुत्र पृथिवी विषयक प्राणी हुए और सङ्कल्प से सर्वात्मक सङ्कल्प की उत्पत्ति हुयी ।।१०८।। अनेक प्रकार के वसु (धन) ही जिनका प्राण है ऐसे ज्योति आठ वसुगण के नाम से प्रसिद्ध देवता है, मैं उनकी वंश का विस्तार बतलाता हूँ ।।१०९।। आप ध्रुव, सोम, धर्म, अनिल, अनल, प्रत्यूष, प्रभास ये आठ वस्तुओं के नाम हैं ।।११०।। आप के चार पुत्र हुए वैतण्ड, श्रम, शान्त एवं ध्वनि । ध्रुव के पुत्र लोक का संहार करने वाले भगवान् काल हुए ।।१११।। सोम के पुत्र वर्चा हुए जिनसे कोई भी पुरुष वर्चस्वी होता है ।।११२।। धर्म के उनकी पत्नी मनोहरा में द्रविण, हुत, हव्यवह, शिशिर, प्राण तथा वरुण हुए ।।११३।। अनिल की पत्नी का नाम शिवा था । उसके दो पुत्र हुए मनोजव और अविज्ञातगति ।।११४।। अग्नि के पुत्र कुमार हुए । ये शरस्तम्ब

प्रत्यूषस्य विदुः पुत्रं ऋषिं नाम्नाथ देवलम्। द्वौ पुत्रौ देवलस्यापि क्षमावन्तौ मनीषिणौ ॥११७॥
बृहस्पतेस्तु भगिनी वरस्त्री ब्रह्मचारिणी। योगसिद्धा जगत्कृत्स्नमसक्ता विचरत्युत।
प्रभासस्य तु सा भार्या वसूनामष्टमस्य तु ॥११८॥
विश्वकर्मा महाभागस्तस्यां जज्ञे प्रजापतिः। कर्ता शिल्पसहस्राणां त्रिदशानां च वर्द्धकी ॥११९॥
भूषणानां च सर्वेषां कर्ता शिल्पवतां वरः। यः सर्वेषां विमानानि देवतानां चकार ह।
मनुष्याश्चोपजीवन्ति यस्य शिल्पं महात्मनः ॥१२०॥
तस्य पुत्रास्तु चत्वारस्तेषां नामानि मे शृणु। अजैकपादहिर्बुध्न्यस्त्वष्टा रुद्रश्च वीर्यवान्।
त्वष्टुश्चाप्यात्मजः पुत्रो विश्वरूपो महातपाः ॥१२१॥
हरश्च बहुरूपश्च त्र्यम्बकश्चापराजितः। वृषाकपिश्च शम्भुश्च कपर्दी रैवतः स्मृतः ॥१२२॥
मृगव्याधश्च शर्वश्च कपाली च महामुने। एकादशैते कथिता रुद्रास्त्रिभुवनेश्वराः।
शतं त्वेकं समाख्यातं रुद्राणाममितौजसाम् ॥१२३॥
कश्यपस्य तु भार्या यास्तासां नामानि मे शृणु। अदितिर्दितिर्दनुश्चैवारिष्टा च सुरसा खसा ॥१२४॥
सुरभिर्विनता चैव ताम्रा क्रोधवशा इरा। कद्रुर्मुनिश्च धर्मज्ञ तदपत्यानि मे शृणु ॥१२५॥
पूर्वमन्वन्तरे श्रेष्ठा द्वादशासन्सुरोत्तमाः। तुषिता नाम तेऽन्योऽन्यमूचुर्वैवस्वतेऽन्तरे ॥१२६॥
उपस्थितेऽतियशसश्चाक्षुषस्यान्तरे मनोः। समवायीकृताः सर्वे समागम्य परस्परम् ॥१२७॥
आगच्छत द्रुतं देवा अदितिं सम्प्रविश्य वै। मन्वन्तरे प्रसूयामस्तन्नः श्रेयो भवेदिति ॥१२८॥
एवमुक्त्वा तु ते सर्वे चाक्षुषस्यान्तरे मनोः। मारीचात्कश्यपाज्जाता अदित्या दक्षकन्यया ॥१२९॥
तत्र विष्णुश्च शक्रश्च जज्ञाते पुनरेव हि। अर्यमा चैव धाता च त्वष्टा पूषा तथैव च ॥१३०॥

(शरकण्डे) में उत्पन्न हुए। इनके अनुज तीन थे, शाख, विशाख और नैगम। कृत्तिकाओं का पुत्र होने के कारण ये कार्तिकेय कहलाये ॥११५-११६॥ प्रत्यूष के पुत्र देवल कहलाते थे। देवल के भी दो पुत्र हुए क्षमावान् और मनीषी॥११७॥ बृहस्पति की बहन वरस्त्री ब्रह्मचारिणी और योगसिद्धा थीं, वे सम्पूर्ण जगत् में अनासक्त होकर विचरण करती थी। वे ही आठवें वसु प्रभाव की पत्नी हुयीं ॥११८॥ वरस्त्री के पुत्र प्रजापति विश्वकर्मा हुए, वे शिल्पों को करने वाले और देवताओं के शिल्पी हुए ॥११९॥ वे सभी भूषणों के निर्माता तथा शिल्पकारों में श्रेष्ठ थे। उन्होंने ही सभी देवताओं के विमानों को बनाया। उन्हीं की शिल्पविद्या को अपनाकर मनुष्य अपनी जीविका का निर्वाह करते हैं ॥१२१॥ विश्वकर्मा के चार पुत्र हुए, उनका नाम सुनो। अजैकपाद, अहिर्बुध्न्य, त्वष्टा तथा पराक्रमी रुद्र। त्वष्टा के पुत्र का नाम विश्वरूप हुआ ॥१२२॥ हे महामुने ! हर, बहुरूप, त्र्यम्बक, अपराजित, वृषाकपि, शम्भु, कपर्दी, रैवत, मृगव्याध, शर्व तथा कपाली ये ग्यारह रुद्र बतलायें गये हैं। ये ग्यारहों रुद्र त्रिभुवन के अधीश्वर हैं। निस्सीम तेजस्वी एक सौ एक रुद्र बतलाये गये हैं ॥१२३॥ अब कश्यप ऋषि की जो दश पुत्रियाँ हुयीं, उनका नाम सुनो— अदिति, दिति, दनु, अरिष्टा, सुरसा, खसा, सुरभि, विनता, ताम्रा, क्रोधवशा, इरा, कद्रु और मुनि। हे धर्मज्ञ! तुम उनकी सन्तानों को मुझसे सुनो ॥१२४-१२५॥ पूर्व मन्वन्तर (चाक्षुष मन्वन्तर) में तुषित नामक बारह श्रेष्ठ देवता हुए। चाक्षुष मन्वन्तर के बीत जाने पर तथा वैवश्वत मन्वन्तर के आने पर वे एक दूसरे से जाकर मिले और परस्पर में कहने लगे ॥१२६-१२७॥ हे देवगण ! आप लोग आयें, हमलोग शीघ्र ही अदिति के गर्भ में प्रवेश करके इस वैवस्वत मन्वन्तर में जन्म लें, इसी में हमलोगों का कल्याण है ॥१२८॥ इस प्रकार से चाक्षुष मन्वन्तर

विवस्वान्सविता चैव मित्रो वरुण एव च। अंशुर्भगश्चातितेजा आदित्या द्वादश स्मृताः ॥१३१॥
चाक्षुषस्यान्तरे पूर्वमासन्ये तुषिताः सुराः। वैवस्वतेन्तरे ते वै आदित्या द्वादश स्मृताः ॥१३२॥
याः सप्तविंशतिः प्रोक्ताः सोमपत्न्योऽथ सुव्रताः। सर्वा नक्षत्रयोगिन्यस्तन्नाम्नयश्चैव ताः स्मृताः ॥१३३॥
तासामपत्यान्यभवन्दीप्तान्यमिततेजसाम् । अरिष्टनेमिपत्नीनामपत्यानीह षोडश ॥१३४॥
बहुपुत्रस्य विदुषश्चतस्रो विद्युतः स्मृताः ॥१३५॥
प्रत्यङ्गिरसजाः श्रेष्ठा ऋचो ब्रह्मर्षिसत्कृताः। कृशाश्वस्य तु देवर्षेर्देवप्रहरणाः स्मृताः ॥१३६॥
एते युगसहस्रान्ते जायन्ते पुनरेव हि। सर्वे देवगणास्तात त्रयस्त्रिंशत्तु छन्दजाः ॥१३७॥
तेषामपीह सततं निरोधोत्पत्तिरुच्यते ॥१३८॥
यथा सूर्यस्य मैत्रेय उदयास्तमनाविह। एवं देवनिकायास्ते सम्भवन्ति युगे युगे॥१३९॥
दित्या पुत्रद्वयं जज्ञे कश्यपादिति नः श्रुतम्। हिरण्यकशिपुश्चैव हिरण्याक्षश्च दुर्जयः ॥१४०॥
सिंहिका चाभवत्कन्या विप्रचित्तेः परिग्रहः ॥१४१॥
हिरण्यकशिपोः पुत्राश्चत्वारः प्रथितौजसः। अनुह्लादश्च ह्लादश्च प्रह्लादश्चैव बुद्धिमान् ।
संह्लादश्च महावीर्या दैत्यवंशविवर्द्धनाः ॥१४२॥
तेषां मध्ये महाभाग सर्वत्र समदृग्वशी। प्रह्लादः परमां भक्तिं य उवाच जनार्दने॥१४३॥
दैत्येन्द्रदीपितो वह्निः सर्वाङ्गोपचितो द्विज । न ददाह च यं विप्र वासुदेवे हृदि स्थिते ॥१४४॥
महार्णवान्तः सलिले स्थितस्य चलतो मही। चचाल सकला यस्यपाशबद्धस्य धीमतः ॥१४५॥

में निश्चय करके उन सभी देवताओं ने मरीचि महर्षि के पुत्र कश्यप महर्षि से दक्ष की पुत्री अदिति के गर्भ से उत्पन्न हुए ॥१२९॥ वे पुनः विष्णु, इन्द्र, अर्यमा, धाता, त्वष्टा, पूषा, विवस्वान्, सविता, मित्र, अंशु और भग वरुण ये अत्यन्त तेजस्वी, बारह देवता आदित्य कहे जाते हैं ॥१३०-१३१॥ पहले के चाक्षुष मन्वन्तर में जो तुषित देवता थे वे ही वैवस्वत मन्वन्तर में द्वादशादित्य कहलाये ॥१३२॥ सोम की जिन सत्ताइस सुव्रता पत्नियों के विषय में पहले कह चुका हूँ, वे सब नक्षत्र योगिनी हैं, और वे नक्षत्रों के ही नाम से जानी जाती है ॥१३३॥ उन अत्यन्त तेजस्विनियों की अनेक प्रतिभा सम्पन्न सन्तानें हुयीं । अरिष्टनेमि की पत्नियों की सोलह सन्तानें हुयीं ॥१३४॥ विद्वान् बहुपुत्र की चार विद्युतें पत्नियाँ कही गयी हैं ॥१३५॥ ब्रह्मर्षियों द्वारा सत्कृत, प्रत्यङ्गिरा नामक तीस श्रेष्ठ मन्त्र अङ्गिरा महर्षि की पत्नी प्रत्यङ्गिरसाओं से उत्पन्न हुए हैं ॥१३६॥ कृशाश्व की सन्तान देवताओं के आयुध रूप देवता बतलाये गये हैं ॥१३७॥ हे तात ! आठ वसु, ग्यारह रुद्र, द्वादशादित्य, प्रजापति और वषट्कार) ये तैंतिस वेद वर्णित देवता अपनी इच्छा के अनुसार जन्म लेते हैं । इनकी सदा उत्पत्ति तथा निरोध होते रहते है । एक हजार युग के पश्चात् ये बार-बार उत्पन्न होते हैं ॥१३७-१३९॥ हे मैत्रेय ! जिस तरह संसार में सूर्य के उदय तथा अस्तमन सदा होते रहते हैं, उसी तरह उन देवों का समुदाय युग-युग में उत्पन्न होता रहता है ॥१३९॥ हमने सुना है कि दिति के कश्यप महर्षि से दो पुत्र उत्पन्न हुए हिरण्कशिपु तथा हिरण्याक्ष तथा एक कन्या हुयी सिंहिका । उसका विवाह विप्रचित्ति से हुआ ॥१४०-१४१॥ हिरण्यकशिपु के प्रख्यात ओजस्वी चार पुत्र हुए, अनुह्लाद, ह्लाद, बुद्धिमान प्रह्लाद और संह्लाद । ये चारो महापराक्रमी और दैत्यवंश को बढ़ाने वाले थे ॥१४२॥ उन चारों में प्रह्लाद समदर्शी तथा जितेन्द्रिय थे । जिन्होंने भगवान् की परमा भक्ति का वर्णन किया ॥१४३॥ दैत्यराज (हिरण्यकशिपु) द्वारा जलायी गयी अग्नि उनके सर्वाङ्ग में व्याप्त होकर भी उन्हें इसलिए नहीं जला सकी क्योंकि उनके हृदय में भगवान् वासुदेव

न भिन्नं विविधैः शस्त्रैर्यस्य दैत्येन्द्रपातितैः । शरीरमद्रिकठिनं सर्वत्राच्युतचेतसः ॥१४६॥
विषानलोज्ज्वलमुखा यस्य दैत्यप्रचोदिताः । नान्तायसर्पपतयो बभूवुरुरुतेजसः ॥१४७॥
शैलैराक्रान्तदेहोऽपि यः स्मरन्पुरुषोत्तमम् । तत्याज नात्मनः प्राणान् विष्णुस्मरणदंशितः ॥१४८॥
पतन्तमुच्चादवनिर्यमुपेत्य महामतिम् । दधार दैत्यपतिना क्षिप्तं स्वर्गनिवासिना ॥१४९॥
यस्य संशोषको वायुर्देहे दैत्येन्द्रयोजितः । अवाप संक्षयं सद्यश्चित्तस्थे मधुसूदने ॥१५०॥
विषाणभङ्गमुन्मत्ता मदहानिं च दिग्गजाः । यस्य वक्षःस्थले प्राप्ता दैत्येन्द्रपरिणामिताः ॥१५१॥
यस्य चोत्पादिता कृत्या दैत्यराजपुरोहितैः । बभूव नान्ताय पुरा गोविन्दासक्तचेतसः ॥१५२॥
शम्बरस्य च मायानां सहस्रमतिमायिनः । यस्मिन्प्रयुक्तं चक्रेण कृष्णस्य वितथीकृतम् ॥१५३॥
दैत्येन्द्रसूदोपहृतं यस्य हालाहलं विषम् । जरयामास मतिमानविकारममत्सरी ॥१५४॥
समचेता जगत्यस्मिन्यः सर्वेष्वेव जन्तुषु । यथात्मनि तथान्येषां परं मैत्रगुणान्वितः ॥१५५॥
धर्मात्मा सत्यशौर्यादिगुणानामाकरः परः । उपमानमशेषाणां साधूनां यः सदाभवत् ॥१५६॥

इति श्रीविष्णुमहापुराण प्रथमेंऽशे पञ्चदशोऽध्यायः ॥१५॥

विराजमान थे ॥१४४॥ पाश में बँधकर समुद्र के जल में स्थित जिनके इधर-उधर चलने पर पृथिवी काँपने लगी॥१४५॥ भगवान् अच्युत के उनके चित्त में रहने के कारण उनका शरीर पर्वत के समान कठोर हो गया और दैत्येन्द्र के द्वारा चलाये गये अस्त्रों तथा शस्त्रों से छिन्न-भिन्न नहीं हो सका ॥१४६॥ जिन महातेजस्वी का अन्त दैत्येन्द्र द्वारा प्रेरित विषाग्नि की ज्वाला से युक्त सर्प भी नहीं कर सके ॥१४७॥ पत्थरों की मार पड़ते रहने पर भी जो प्रह्लाद अपने प्राणों का परित्याग इसलिए नहीं किए कि वे पुरुषोत्तम भगवान् विष्णु के स्मरण का कवच पहन रखे थे ॥१४८॥ स्वर्गनिवासी दैत्यपति के द्वारा ऊपर से गिराये जाने पर भी पृथिवी बीच में ही जाकर उनको धारण कर ली ॥१४९॥ दैत्यराज के द्वारा प्रेरित सबों का शोषण करने वाली महावायु जिनके शरीर से लगते ही इसलिए शान्त हो गयी कि उनके चित्त में भगवान् मधुसूदन स्थित थे ॥१५०॥ दैत्यराज के द्वारा प्रेरित उन्मत्त दिग्गजों के दाँत जिनके बक्षःस्थल से लगते ही टूट गये और उनका मद चूर-चूर हो गया ॥१५१॥ प्राचीन काल में जिनका मन भगवान् गोविन्द में लगे रहने के कारण, दैत्यराज के पुरोहितों द्वारा उत्पन्न की गयी कृत्या उन्हें नहीं मार सकी॥१५२॥ जिनके ऊपर प्रयोग की गयी शम्बरासुर की हजारों मायायें भगवान् के चक्र के द्वारा व्यर्थ बना दी गयीं॥१५३॥ जिन मूर्तिमान तथा मत्सर रहित प्रह्लाद ने दैत्यराज के रसोइये के द्वारा लाये गये हलाहल विष को निर्विकार भाव से पचा लिया ॥१५४॥ जो इस संसार में सभी जीवों को समान रूप से देखते थे तथा अपने ही समान सबों के प्रति मैत्री का भाव रखते थे, जो परम धर्मात्मा, सत्य तथा शौर्य आदि गुणों के आकर तथा सभी साधु पुरुषों के लिए उपमान स्वरूप थे ॥१५५-१५६॥

इस तरह श्रीविष्णुमहापुराण के प्रथम अंश के पन्द्रहवें अध्याय का शिवप्रसाद द्विवेदी (श्रीधराचार्य) कृत हिन्दी अनुवाद सम्पूर्ण हुआ ॥१५॥